^ सक्षिप्त परिचय

वैदिक युग में 'संगीत' समाज में स्थान बना चुका था। सबसे प्राचीन ग्रन्थ 'ऋग्वेद' में आर्यो के आमोद-प्रमोद का मुख्य साधन संगीत को बताया गया है। अनेक वाद्यों का आविष्कार भी ऋग्वेद के समय में बताया जाता है। 'यजुर्वेद' में संगीत को अनेक लोगों की आजीविका का साधन बताया गया, फिर गान प्रधान वेद 'सामवेद' आया, जिसे संगीत का मूल ग्रन्थ माना गया। 'सामवेद' में उच्चारण की दृष्टि से तीन और संगीत की दृष्टि से सात प्राकार के स्वरों का उल्लेख है। 'सामवेद' का गान (सामगान) मेसोपोटामिया, फैल्डिया, अक्कड़, सुमेर, बवेरु, असुर, सुर, यरुशलम, ईरान, अरब, फिनिशिया व मिस्र के धार्मिक संगीत से पर्याप्त मात्रा में मिलता-जुलता था।

उत्तर वैदिक काल के 'रामायण' ग्रन्थ में भेरी, दुंदभि, वीणा, मृदंग व घड़ा आदि वाद्य यंत्रों व भँवरों के गान का वर्णन मिलता है, तो 'महाभारत' में कृष्ण की बाँसुरी के जादुई प्रभाव से सभी प्रभावित होते हैं। अज्ञातवास के दौरान अर्जुन ने उत्तरा को संगीत-नृत्य सिखाने हेतु बृहन्नला का रूप धारण किया। पौराणिक काल के 'तैत्तिरीय उपनिषद', 'ऐतरेय उपनिषद', 'शतपथ ब्राह्मण' के अलावा 'याज्ञवल्क्य-रत्न प्रदीपिका', 'प्रतिभाष्यप्रदीप' और 'नारदीय शिक्षा' जैसे ग्रन्थों से भी हमें उस समय के संगीत का परिचय मिलता है। चौथी शताब्दी में भरत मुनि ने 'नाट्यशास्त्र' के छः अध्यायों में

Scanned with CamScanner

संगीत पर ही चर्चा की। इनमें विभिन्न वाद्यों का वर्णन, उनकी उत्पत्ति, उन्हें बजाने के तरीकों, स्वर, छन्द, लय व विभिन्न कालों के बारे में विस्तार से लिखा गया है। इस ग्रन्थ में भरत मुनि ने गायकों और वादकों के गुणों और दोषों पर भी खुलकर लिखा है। बाद में छ: राग 'भैरव', 'हिंडोल', 'कैशिक', 'दीपक', 'श्रीराग' और 'मेध' प्रचार में आये। पाँचवीं शताब्दी के आसपास मतंग मुनि द्वारा रचित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ 'वृहददेशी' से पता चलता है कि उस समय तक लोग रागों के बारे में जानने लगे थे। लोगों द्वारा गाये-बजाये जाने वाले रागों को मतंग मुनि ने देशी राग कहा और देशी रागों के नियमों को समझाने हेतु 'वृहद्देशी' ग्रन्थ की रचना की। मतंग ही पहले व्यक्ति थे जिन्होंने अच्छी तरह से सोच-विचार कर पाया कि चार या पाँच स्वरों से कम में राग बन ही नहीं सकता। पाणिनी के 'अष्टाध्यायी' में भी अनेक वाद्यों जैसे मृदंग, झर्झर, हुड़क तथा गायकों व नर्तकों सम्बन्धी कई बातों का उल्लेख है। सातवीं–आठवीं शताब्दी में 'नारदीय शिक्षा' और 'संगीत मकरंद' की रचना हुई। 'संगीत मकरंद' में राग में लगने वाले स्वरों के अनुसार उन्हें अलग-अलग वर्गों में बाँटा गया है और रागों को गाने-बजाने के समय पर भी गम्भीरता से सोचा गया है।

ग्यारहवीं शताब्दी में मुसलमान अपने साथ फारस का संगीत लाए। उनकी और हमारी संगीत पद्धतियों के मेल से भारतीय संगीत में काफी बदलाव आया। उस दौर के राजा-महाराजा भी संगीत-कला के प्रेमी थे और दूसरे संगीतज्ञों को आश्रय

Scanned with CamScanner

देकर उनकी कला को निखारने-सँवारने में मदद करते थे। बादशाह अकबर के दरबार में 36 संगीतज्ञ थे। उसी दौर के तानसेन, बैजूबावरा, रामदास व तानरंग खाँ के नाम आज भी चर्चित हैं। जहाँगीर के दरबार में खुर्रमदाद, मक्खू, छत्तर खाँ व विलास खाँ नामक संगीतज्ञ थे। कहा जाता है कि शाहजहाँ तो खुद भी अच्छा गाते थे और गायकों को सोने-चाँदी के सिक्कों से तौलवाकर ईनाम दिया करते थे। मुगलवंश के एक और बादशाह मुहम्मदशाह रंगीले का नाम तो कई पुराने गीतों में आज भी मिलता है। ग्वालियर के राजा मानसिंह भी संगीत प्रेमी थे। उनके समय में ही संगीत की खास शैली 'ध्रुपद' का विकास हुआ। 12वीं शताब्दी में संगीतज्ञ जयदेव ने 'गीतगोविन्द' नामक संस्कृत ग्रन्थ लिखा, इसे सकारण 'अष्टपदी' भी कहा जाता है। तेरहवीं शताब्दी में पण्डित शारंगदेव ने 'संगीतरत्नाकर' की रचना की। इस ग्रन्थ में अपने दौर के प्रचलित संगीत और भरत व मतंग के समय के संगीत का गहन अध्ययन मिलता है। सात अध्यायों में रचे होने के कारण इस उपयोगी ग्रन्थ को 'सप्ताध्यायी' भी कहा जाता है। शारंगदेव द्वारा रचित 'संगीत रत्नाकर' के अतिरिक्त चौदहवीं शताब्दी में विद्यारण्य द्वारा 'संगीत सार', पन्द्रहवीं शताब्दी में लोचन कवि द्वारा 'राग तरंगिणी', सोलहवीं शताब्दी में पुण्डरीक विट्ठल द्वारा 'सद्रागचंद्रोदय', रामामात्य द्वारा 'स्वरमेल कलानिधि', सत्रहवीं शताब्दी में हृदयनारायण देव द्वारा 'हृदय प्रकाश' व 'हृदय कौतुकम्', व्यंकटमखी द्वारा 'चतुर्दंडिप्रकाशिका', अहोबल द्वारा'संगीत पारिजात', दामोदर

Scanned with CamScanner

पण्डित द्वारा 'संगीत दर्पण,' भावभट्ट द्वारा 'अनूप विलास' व 'अनूप संगीत रत्नाकार', सोमनाथ द्वारा 'अष्टोत्तरशतताल लक्षणाम' और अठारहवीं शताब्दी में श्रीनिवास पण्डित द्वारा 'राग तत्व विबोधः', तुलजेन्द्र भोंसले द्वारा 'संगीत सारामृतम्' व 'राग लक्ष्मण्' ग्रन्थों की रचना हुई। स्वामी हरिदास, विट्ठल, कृष्णदास, त्यागराज, मुथ्थुस्वामी दीक्षितर और श्यामा शास्त्री जैसे अनेक संत कवि–संगीतज्ञों ने भी उत्तर आदि दक्षिण भारत के संगीत को अनगिनत रचनाएँ दीं। कहा जा सकता है कि भारतीय संगीत शताब्दियों के प्रयास व प्रयोग का परिणाम है।

Scanned with CamScanner